वेंकटराजा एवं अन्य

बनाम

विद्याने डौरेराडजापेरूमल (डी) जरिये विधिक उत्तराधिकारी एवं अन्य

(सिविल अपील नं. 7605-7606 आंफ 2004)

अप्रेल 10, 2013

बी.एस.चौहान, न्यायाधिपति - ये अपीलें 1991 की द्वितीय अपील संख्या 1536-1537 में मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा पारित दिनांक 12-12-2003 के आक्षेपित निर्णय और आदेश के खिलाफ दायर की गई है, जिसके माध्यम से 1983 के अपील सं. 198 और 1988 के अपील सं. 43 में प्रथम अतिरिक्त जिला न्यायाधीश द्वारा पारित निर्णय एवं डिक्री और सिविल न्यायालय के ओरिजनल नं. 58 को यह मानते हुये कि वादी, अपीलकर्ता के पिता द्वारा दायर किया गया मुकदमा सं. ओरिजनल सूट सं. 58/1982 को पोषणीयता के आधार पर हस्तगत अपीलों का जन्म देने वाले तथ्य और परिस्थितियां इस प्रकार है:

(अ) वाद सम्पत्ति यानी हाउस नम्बर 9/39, सावरिपदायाची स्ट्रीट, नेलिथोप, पांडिचेरी, मूल रूप से मृत अपीलकर्ता/परदादा वेंगदाचला नायकर पुत्र श्री अय्यमपेरूमल नायकर की सम्पत्ति थी। उन्हाने उपरोक्त वादग्रस्त सम्पत्ति 13-12-1896 को अपने नाबालिग पोते राद्जा रो और किचनादजी रो पुत्रगण पोन्नुसामी नाइकर के पक्ष में दान कर दी, और उक्त दान विलेख

18-1-1897 को पंजीकृत किया गया था। विलेख में, यह प्रावधान किया गया था कि दान पाने वालों/ पोते के पास केवल जीवन पर्यन्त तक यह सम्पत्ति होगी और उनकी मृत्यु के बाद, केवल उनके पुरूष कानूनी उत्तराधिकारी हस्तान्तरित करने के अधिकार के साथ, मुकदमे की सम्पत्ति के हकदार होंगे।

(ब) इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये कि उस समय दानकर्ता नाबालिग थे, उक्त विलेख में उनके पिता पोन्नुसामी नाइकर को संरक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था।

(स) प्राप्तकर्ता किचंदजी रो की निःसंतान मृत्यु हो गई और इसलिये, अन्य प्राप्तकर्ता राडजा रो से वाद सम्पत्ति का पूर्ण भोग्य स्वामी बन गया। राद्जा रो की भी मृत्यु हो गई और वह अपने पीछे अपनी पत्नी थायनायागी अम्मल्ले और अपने बेटे कन्नुसामी रो को छोड़ गए। उक्त कन्नुसामी रो अपनी मां थायनायागी अम्मल्ले और अपनी पत्नी कुप्पम्मल को छोडकर निःसंतान मर गये। कुप्पम्मल की मृत्यु के बाद, थायनायगी अम्मल्ले सम्पत्ति के एकमात्र उत्तराधिकारी बन गई। थायनायगी अम्मल्ले ने बाद में प्रतिवादी सं.1 वेदावल्लियाम्मल्ले के पक्ष में दिनांक 16-7-1959 को एक बिक्री विलेख निष्पादित किया।

(द) दान विलेख दिनांक 13-12-1896 की शर्तो के अनुसार, कन्नूसामी रो की मृत्यु के बाद, मुकदमा सम्पत्ति केवल उनके पुरूष कानूनी उत्तराधिकारियों को हस्तान्तरित हो सकती थी। चूंकि मृतक राडजा रो के

पास कोई सन्तान नहीं थी, इसलिये मुकदमे की सम्पत्ति एकमात्र पुरूष प्रत्यावर्ती और जीवित उत्तराधिकारी के पास जानी थी, यानी राडजा रो के चचेरे भाई रामराजा, जो दाता वेंगदाचला नाइकर के पाते थे।

(ई) उपरोक्त वाद पत्रों के आधार पर, अपीलकर्ता/वादी ने प्रतिवादी सं.1 वेदवल्लियामल्ले के खिलाफ एक मुकदमा तत्कालीन फ्रांस न्यायालय की प्रथम अधिकरण में यह अनुतोष प्राप्त करने के लिये दायर किया गया कि वादी वास्तव में मृतक राडजा रो का उत्तराधिकारी था और प्रतिवादी सं. 1 को मुकदमे की सम्पत्ति को खुर्द बुर्द न करने का निर्देश प्रदान किया जाये।

(एफ) उक्त मुकदमा दायर करने के तुरन्त बाद पांडिचेरी की फ्रांसीसी कॉलोनी का भारत संघ में विलय कर दिया गया। हिन्दू उत्तराधिकारी अधिनियम 1956(बाद में अधिनियम 1956 के रूप में संदर्भित) को 1-10-1963 से केन्द्र शासित प्रदेश पांडिचेरी में भी लागू कर दिया गया था।

(जी) अपीलकर्ता/वादी द्वारा दायर मुकदमे का फैसला दिनांक 18-8-1965 के निर्णय और डिक्री द्वारा किया गया, जिसमें यह माना गया कि चूंकि थायनायागी अम्मल्ले अभी भी जीवित थी इसलिए अपीलकर्ता/वादी का दावा समय से पहले दायर किया गया था हालांकि, उक्त मुकदमे में, एक राय व्यक्त की गई थी कि अपीलकर्ता/वादी मृतक राडजा रो का कानूनी उत्तराधिकारी था।

(एच) उक्त निर्णय से व्यथित होकर वेदावल्लियामल्ले प्रतिवादी सं.1 ने उक्त निर्णय के विरूद्ध अपील दायर की। अदालत के इस निष्कर्ष के संबंध में क्या अपीलकर्ता/वादी मृतक राडजा रो का कानूनी उत्तराधिकारी था, को थायनायागी अम्मल्ले द्वारा अपील में प्रेस नहीं किया गया और केवल आयुक्त की नियुक्ति का विरोध किया गया। आयुक्त को यह निर्धारित करने के लिये नियुक्त किया गया था कि क्या मुकदमाग्रस्त सम्पत्ति में कोई मरम्मत की आवश्यकता थी या नहीं ?

(1) अपीलीय अदालत ने दिनांक 2-2-1970 के फैसले के तहत अपील को इस सीमा तक स्वीकार किया गया कि मुकदमे की सम्पत्ति को मरम्मत आवश्यक नहीं थी। उक्त थायनायागी अम्मल्ले की मृत्यु 30-05-1978 को हुई। इस समय, वाद की सम्पत्ति पर अपीलकर्ता के दावे को विपक्षी दलों द्वारा स्वीकार नहीं किया गया था। प्रतिवादी सं.1 वेदावल्लियामल्ले और उनके पति प्रतिवादी सं.2 ने इसके बाद 30-5-1979 को प्रतिवादीगण सं. 3 से 9 के पक्ष में मुकदमे की सम्पत्ति पट्टे पर दे दी और इसका किराया प्राप्त कर रहे थे।

(जे) प्रतिवादी सं. 10 जयरमन, जो क्रमशः प्रतिवादी सं. 4 और 5 के पति और पिता थे, ने पंजीकृत बिक्री विलेख दिनांक 26-4-1980 के माध्यम से प्रतिवादी सं. 1 से वाद सम्पत्ति क्रय कर ली।

(के) मृतक वादी यानी अपीलकर्ताओं के पिता ने पांडिचेरी के सिविल कोर्ट में 1982 का ओरिजनल सूट नं. 58 यह घोषणा प्राप्त करने के

लिये दायर किया कि वह मृतक राडजा रो का कानूनी उत्तराधिकारी था और इस प्रकार उसके पास मुकदमे का उचित स्वामित्व था और वेदावल्लियामल्ले के पक्ष में थायनायागी अम्मल्ले द्वारा दिनांक 16-7-1959 को निष्पादित बिक्री विलेख शून्य और शून्य था क्योंकि सम्पत्ति को अन्तरित करने के लिये उसके पास केवल एक जीवन पर्यन्त उपभोग हेतु सम्पत्ति थी और पूर्ण स्वामित्व नहीं था।

(एल) उक्त मुकदमे का उत्तरदाताओं/प्रतिवादियों द्वारा विरोध किया गया और इसका निर्णय 7-10-1983 का सिविल न्यायालय द्वारा किया गया, जिसमें कहा गया कि-

(ए) चूंकि कन्नूसामी रो की मृत्यु हिन्दू उत्तराधिकारी अधिनियम की शुरूआत से पहले हो गई थी और फ्रांसीसी क्षेत्र पांडिचेरी में लागू हिन्दू कानून को ध्यान में रखते हुये, मुकदमे की सम्पत्ति के एकमात्र पुरूष उत्तराधिकारी की मृत्यु के बाद, पत्नी और मां की मृत्यु हो गई थी। कानूनी उत्तराधिकारी के पास वाद की सम्पत्ति पर केवल निर्वहन का अधिकार होगा, पूर्ण स्वामित्व नहीं होगा।

(बी) 1959 में लागू उपरोक्त प्रथागत हिन्दू कानून के अनुसार, विक्रेता थायनायागी अम्मल्ले के पास सम्पत्ति पर केवल निर्वहन का अधिकार था और उसे अन्तरित करने का पूर्ण अधिकार नहीं था।

(सी) इसलिये, प्रत्यावर्ती पुरूष उत्तराधिकारी मूल दाता का एकमात्र उत्तराधिकारी होने के नाते, सम्पत्ति का उत्तराधिकारी होने का हकदार था।

(डी) प्रतिवादियों ने स्वामित्व अथवा निर्धारित अवधि बीत जाने के आधार पर स्वामित्व प्राप्त नहीं किया था।

(ई) मुकदमे पूर्व न्याय के सिद्धान्त से बाधित नहीं था।

यद्यपि अदालत ने अपीलकर्ता/वादी के पक्ष में स्वामित्व के प्रश्न का फैसला किया, लेकिन यह पाया कि अपीलकर्ता/वादी ने मुकदमा केवल सम्पत्ति पर अपने अधिकार की घोषणा के लिये दायर किया था और चूंकि उसने परिणामी राहत की मांग नहीं की थी और प्रतिवादी ने कब्जा प्राप्त करने का अनुतोष नहीं माना गया था, मुकदमे का चलने योग्य नहीं माना गया और खारिज कर दिया गया।

(एम) अपीलकर्ता/वादी ने जिला न्यायाधीश की अदालत के समक्ष उक्त निर्णय और आदेश दिनांक 7-10-1983 को चुनौती देते हुये एक अपील दायर की, और उक्त अपील को दिनांक 13-4-1989 के निर्णय और डिक्री द्वारा यह राय रखते हुये स्वीकार किया गया कि बिक्री विलेख 16-7-1959 को प्रतिवादी संख्या 1 के पक्ष में थायनायागी अम्मल्ले द्वारा निष्पादित किया गया था जो कि पांडिचेरी में हिन्दू उत्तराधिकार अधिनियम 1-10-1963 से लागू किया गया है इसका परिणाम यह हुआ कि उसने मुकदमे की सम्पत्ति में केवल अपनी जीवन सम्पत्ति (निर्वहन अधिकार) बेची थी, क्योंकि वह केवल जीवन सम्पत्ति धारक थी और उसकी मृत्यु पर, सम्पत्ति एकमात्र जीवित प्रत्यावर्ती को हस्तान्तरित हो गई थी। इसके अलावा, यह माना गया कि चूंकि अपीलकर्ता/वादी ने वादग्रस्त सम्पत्ति के सम्बन्ध में

घोषणा के लिये एक मुकदमा दायर किया था जिसमें किरायेदार काबिज थे। अतः अपीलकर्ता के लिये इस कारण से किसी भी परिणामी राहत का दावा करना आवश्यक नहीं था क्योंकि कब्जा प्राप्त करने के लिये पांडिचेरी गैर-कृषि कुडियिरूप्पदार (बेदखली की कार्यवाही पर रोक) अधिनियम 1980 (इसके बाद अधिनियम 1980 के रूप में संदर्भित) के तहत उचित राहत का दावा किया जा सकता है। इस प्रकार, कब्जा वापस पाने के लिये अलग से प्रार्थना की कोई आवश्यकता नहीं थी, क्योंकि इसे केवल विशेष अधिनियम के तहत ही मांगा जा सकता था।

(एन) उत्तरदाताओं/प्रतिवादियों ने उक्त निर्णय व डिक्री से व्यथित होकर द्वितीय अपील दायर की, और उक्त अपीलों के लंबित रहने के दौरान, वेदावल्लियामल्ले ने 31-3-1993 को प्रतिवादी संख्या 1 से 3 को मुकदमे की सम्पत्ति विक्रय कर दी। इसके मद्देनजर, उन्हें भी प्रतिवादी के रूप में अपील में शामिल किया गया था। उक्त अपीलों का निर्णय दिनांक 12-12-2003 के आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा किया गया, जिसमें उच्च न्यायालय ने माना कि थायनायागी अम्मल्ले ने सम्पत्ति पर पूर्ण स्वामित्व हासिल कर लिया था। चूंकि प्रतिवादी सं. वेदावल्लियाम्मले ने 11-7-1959 के विक्रय विलेख के माध्यम से पूर्ण मालिक थायनायागी अम्मल्ले से वाद सम्पत्ति खरीदी थी, वह असली मालिक बन गई थी, और उक्त विषय विलेख अमान्य नहीं था। साथ ही, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये कि उक्त वेदवल्ली अम्माले का मुकदमे की सम्पत्ति पर 10 वर्षो से अधिक समय से

कब्जा था, उसने फ्रांसीसी नागरित सहिता के प्रावधानों के तहत निश्चित समयावधि के बीत जाने तक कब्जे में होने के आधार पर (नुख्से) द्वारा मालिकाना हक हासिल कर लिया था और उसके परिणामस्वरूप, कब्जे की राहत की मांग के बिना घोषणा का मुकदमा चलने योग्य नहीं था।

इसलिये, ये अपीलें दायर की गई है।

(3) अपीलकर्ता की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर.वेंकटरमणि द्वारा पक्ष रखा गया कि उच्च न्यायालय ने यह मानकर त्रुटि की है कि थायनायागी अम्मल्ले ने मुकदमे की सम्पत्ति पर पूर्ण स्वामित्व हासिल कर लिया था, और वाद की सम्पत्ति को वेदवल्लियाम्मल्ले को बेचकर, जिन्होंने 16-7-1959 के विक्रय विलेख के माध्यम से उससे वाद की सम्पत्ति खरीदी थी, वेदावल्लियामल्ले, वाद सम्पत्ति का पूर्ण स्वामी बन गया था और विक्रय विलेख (एक्सट. ए.4) अमान्य नहीं था।

विचारण न्यायालयों ने यह निष्कर्ष दर्ज किया है कि थायनायागी अम्मल्ले केवल एक जीवन सम्पत्ति धारक थी और इस प्रकार, उन्होंने पूर्ण स्वामित्व हासिल नहीं किया था। उच्च न्यायालय ने उक्त तथ्य निष्कर्ष को उलटने के लिये कोई भी कारण नहीं बताया है। उक्त् निष्कर्ष बिना किसी साक्ष्य के आधारित होने के कारण् विकृत है। यदि उक्त निष्कर्ष निरस्त किया जाता है तो दिनांक 16-7-1959 का विक्रय विलेख, क्रेता, वेदावल्लियामल्ले को कोई स्वामित्व प्रदान नहीं करता है। इससे भी

अधिक, उच्च न्यायालय ने कानून के महत्वपूर्ण प्रश्न को सही ढंग से विरचित नहीं किया है, बल्कि इसने पूरी तरह से अप्रासंगिक प्रश्नो को विरचित किया है, जैसे कि, नुस्खे और सीमा का मुद्दा। उच्च न्यायालय ने यह मानकर एक त्रुटि की है कि घोषणात्मक वाद बिना किसी परिणामी राहत की मांग के चलने योग्य नहीं है, जबकि प्रथम अपीलीय न्यायालय ने सही माना है कि ऐसे मामले में जहां सम्पत्ति किरायेदारों के कब्जे में थी, और जहां कब्जा वापस पाने के अन्य साधन भी थे, उस पहलू में किसी भी परिणामी राहत की मांग करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। अतः अपीलें स्वीकार किये जाने योग्य है।

(4) इसके विपरीत, उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ वकील श्री आर. बालासुब्रमण्यम ने अपील का विरोध करते हुये कहा कि विशेष राहत अधिनियम 1963 की धारा 34 के प्रावधानों के अनुसार घोषणा के लिये मुकदमे को बनाये रखने के लिये परिणामी राहत की मांग करना आवश्यक था। पक्षों द्वारा दी गई दलीलों से पता चलता है कि उत्तरदाताओं का अपने किरायेदारों के साथ सम्पत्ति पर भौतिक कब्जा था। उस पर उनका एकराधिकारीय कब्जा था। इसलिये, चूंकि कोई परिणामी राहत नहीं मांगी गई थी, इसलिये मुकदमा चलने योग्य नहीं था। इससे भी अधिक, परिसीमा का प्रश्न बहुत प्रासंगिक था और उच्च न्यायालय द्वारा इसका उचित निपटारा किया गया है। अपीलों में योग्यता नहीं है और यह खारिज किये जाने योग्य है।

(5) हमने पक्षों के विद्वान वकील द्वारा की गई प्रतिद्वंदी दलीलों पर विचार किया है और रिकार्ड का अवलोकन किया है।

(6) रामराजा ने खुद को प्रत्यावर्तक अधिकारी होने का दावा करते हुये क्रेता वेदावल्ली अम्मल्ले के खिलाफ मुकदमा दायर किया था, जिसका फैसला 1965 में हुआ था, और स्वामित्व की प्रकृति के मुद्दे पर विचार किया गया, कि क्या थायनायागी अम्मल्ले का सम्पत्ति में हित केवल निर्वहन का था या पूर्ण था। न्यायालय द्वारा 29-11-1965 के फैसले और डिक्री के माध्यम से यह निष्कर्ष लिया गया कि वाद समय से पहले दायर किया गया है क्योंकि मुकदमा थायनायागी अम्मल्ले के जीवनकाल के दौरान दायर नहीं किया जा सकता था। सन् 1982 के मूल वाद नम्बर 58 में निस्संदेह, प्रतिस्पर्धी उत्तरदाताओं को भी मुकदमे की सम्पत्ति के निवासियों के रूप में दिखाया गया है और दावा केवल इस घोषणा के लिये किया गया है कि वादी मृतक कन्नुसामीरो का कानूनी उत्तराधिकारी है, जो कि वेंकटचला नाइकर के पडपोते थे तथा जिनके पास मुकदमे की सम्पत्ति का स्वामित्व था और इसके अलावा, यह घोषणात्मक अनुतोष भी मांगा गया कि दिनांक 16-7-1959 को बिक्री विलेख अमान्य था।

जवाबदावे के पैरा 4 में, यह उल्लेख किया गया है कि उत्तरदाता/प्रतिवादी अपने किरायेदारों, प्रतिवादी संख्या 3 से 9 के साथ सम्पत्ति में रह रहे थे। पक्षों द्वारा की गई दलीलों को ध्यान में रखते हुये, ट्रायल कोर्ट द्वारा बडी संख्या में विवाद्यक विरचित किये गये, जिसमें यह

भी शामिल था कि क्या वादी, मृतक कन्नुसामी रो का कानूनी उत्तराधिकारी था; क्या विक्रगय विलेख दिनांक 16-7-1959 अमान्य थाः और क्या वादी घोषणा के लिये हकदार था, जैसा कि प्रार्थना की गई थी।

(7) विचारण न्यायालय ने माना कि थायनायागी अम्मल्ले ने पूर्ण अधिकार हासिल नहीं किया था और इसलिए वादी, प्रतिवर्ती था। विक्रय पत्र दिनांक 16-7-1959 अमान्य था। परन्तु वादग्रस्त सम्पत्ति उत्तरदाताओं/प्रतिवादियों के कब्जे में थी और कब्जे को प्राप्त करने की परिणामी राहत नहीं मांगी गई थी अतः मुकदमा चलने योग्य नहीं था।

(8) उपरोक्त निर्णय से व्यथित होकर, पार्टियो द्वारा क्रॉस मुकदमा सं. 198/83, 21/88 और 43/88 दायर किये गये। उपरोक्त सभी अपील मुकदमों का निपटारा प्रथम अपीलीय न्यायालय के एकल निर्णय द्वारा किया गया और उक्त अदालत ने माना, कि वेदावल्लियामल्ले वादग्रस्त सम्पत्ति में नहीं रह रही थी क्योंकि वह कही और रह रही थी, और उसने घर को तीन अलग-अलग किरायेदारों को किराये पर दे दिया था। कुल सदस्यों की संख्या लगभग 26 थी। इस प्रकार प्रतिवादी नम्बर 1 के पास 1969 तक भी मुकदमे की सम्पत्ति का कब्जा नहीं था, और इसी प्रकार प्रतिवादी नम्बर 10 के पास भी मुकदमे की सम्पत्ति का कब्जा नहीं था।

इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये कि किरायेदारों को बाद में अपीलकर्ता/वादी द्वारा अधिनियम 1980 के प्रावधानों का सहारा लेकर बेदखल किया जा सकता था, जिसे 31-3-1990 तक बढा दिया गया था,

मुकदमा चलने योग्य था, अतः विचारण न्यायालय को उक्त मुकदमे को इस आधार पर खारिज नहीं करना चाहिये था कि अपीलकर्ता/वादी ने कब्जे प्राप्त करने के लिये परिणामी राहत की मांग नहीं की थी।

(9) उच्च न्यायालय ने इसमें शामिल विभिन्न बिन्दुओं पर विचार करने के बाद माना कि फ्रांसीसी नागरिक संहिता 1908 के अनुच्छेद 2265 के अनुसार, एक व्यक्ति जिसने सद्भाव में एक अचल सम्पत्ति एक ऐसे स्वामित्व प्रदान करने वाले दस्तावेज के अन्तर्गत प्राप्त की है जो कि अन्यथा भी सम्पत्ति के लगातार दस वर्षो से कब्जे में रहने के आधार पर, जब मालिक उसी जिले में रहता है, जिसमें भूमि स्थित है, या बीस वर्षो में, यदि वास्तविक मालिक जिले के बाहर रहता है, तो नुस्खे द्वारा भूमि पर अपना शीर्षक पूरा कर लेगा।

यह स्वीकृत तथ्य है कि, पहले प्रतिवादी वेदवल्लीअम्मल्ले ने दिनांक 16-7-1959 के विक्रय विलेख के द्वारा पूर्ण मालिक थायनायागी अम्मल्ले से वादग्रस्त सम्पत्ति खरीदी थी। इस प्रकार, वह असली मालिक बन गई थी और उक्त विक्रय विलेख अमान्य नहीं है।

(10) इन अपीलों में फ्रांसीसी हिन्दू कानून की व्याख्या के संबंध में सवाल उठाये गये है, कि क्या एक हिन्दू विधवा जिसके पास केवल जीवन पर्यन्त सम्पत्ति उपभोग का अधिकार है, सम्पत्ति की पूर्ण मालिक मानी जा सकती है, और इस प्रकार वह उक्त सम्पत्ति को हस्तान्तरित करने में सक्षम

है एवं दूसरा प्रश्न यह है कि अपीलकर्ता/वादी द्वारा कोई परिणामी राहत नहीं मांगे जाने पर भी क्या वाद चलने योग्य था।

(11) जहां तक बिन्दु संख्या 1 का सवाल है, निस्संदेह, अधिनियम 1956 को बहुत बाद के चरण में केन्द्र शासित प्रदेश पांडिचेरी में लागू किया गया था। इस मुद्दे से निपटने वाले फ्रांसीसी अदालतों और मद्रास उच्च न्यायालय के विभिन्न निर्णयों का हमारे सामने हवाला दिया गया है, लेकिन इस तथ्य को ध्यान में रखते हुये कि उत्तरदाताओं की ओर से उपस्थित वरिष्ठ वकील श्री आर. बाला सुब्रमण्यम ने ईमानदारी पूर्वक यह स्वीकार किया है कि ऐसी हिन्दू विधवा पूर्ण अधिकार प्राप्त नहीं कर सकती थी, हमारे लिये उस विवाद में पडने का कोई कारण नहीं है। अन्यथा भी उच्च न्यायालय द्वारा दर्ज किया गया निष्कर्ष किसी सबूत पर आधारित नहीं है और ट्रायल कोर्ट के साथ-साथ प्रथम अपीलीय न्यायालय द्वारा दर्ज किये गये निष्कर्षो को उलटने के लिये कोई कारण नहीं दिया गया है कि थायनायागी अम्मल्ले केवल जीवन सम्पत्ति धारक थे। हमारा मानना है कि उच्च न्यायालय ने इस तरह के निष्कर्ष को दर्ज करने में गलती की है।

(12) जहां तक प्रतिकूल कब्जे के मुद्दे का सवाल है, हमारी विनम्र राय में, ट्रायल कोर्ट के पहले के फैसले के मद्देनजर, जिसमें 1965 में यह माना गया था कि अपीलकर्ता/वादी द्वारा दायर मुकदमा समय से पहले दायर किया गया था, क्योंकि वह थायनायागी अम्मल्ले के जीवनकाल के

दौरान इसे दायर नहीं कर सकता था, उच्च न्यायालय के पास इस बिन्दु को निर्णित करने का कोई अवसर उपलब्ध नहीं था।

(13) इस प्रकार, एकमात्र प्रासंगिक मुद्दा जिस पर निर्णय टिका है, वह यह है कि क्या मुकदमा बिना किसी परिणामी राहत की मांग के चलने योग्य था।

देव कुएर और अन्य बनाम शेओ प्रसाद सिंह और अन्य, एआईआर 1966 सुप्रीम कोर्ट 359 में इस न्यायालय ने एक समान तथ्यों के वाद में और विशिष्ट राहत अधिनियम 1877 की धारा 42 के प्रावधानों पर विचार किया गया (अधिनियम 1963 की धारा 34 के अनुरूप), और माना, कि जहां प्रतिवादी भौतिक कब्जे में नहीं था, और वादी को कब्जा देने की स्थिति में नहीं था, सम्पत्ति के स्वामित्व की घोषणा के मुकदमे में वादी के लिये कब्जे का दावा करना आवश्यक नहीं था। इस तरह का विचार रखते समय, इस न्यायालय ने सुन्दर सिंह मल्लाह सिंह सनातन धर्म हाई स्कूल ट्रस्ट बनाम प्रबन्ध समिति, सुन्दर सिंह मल्लाह सिंह राजपूत हाई स्कूल, एआईआर 1938 प्रिवी काउंसिल 73 में प्रिवी काउंसिल और हुमायूं बेगम बनाम शाह मोहम्मद खान, एआईआर 1943 प्रिवी काउंसिल 941 के निर्णयों के आधार पर राय कायम की गई।

(14) विनय कृष्णा बनाम केशव चन्द्र एवं अन्य, एआईआर 1993 सुप्रीम कोर्ट 957 में, इस न्यायालय ने इसी तरह के मुद्दे से निपटते हुये कहाः

'' अब यह भी स्पष्ट है कि वह विशेष कब्जे में नहीं थी क्योंकि माना जाता है कि केशव चंद्र और जगदीश चंद्र का कब्जा था। कब्जे में अन्य किरायेदार भी थे। ऐसी स्थिति में कब्जे का अनुतोष भी मांगा जाना चाहिये था। ऐसा अनुतोष न मांगा जाना निस्संदेह घोषणा के लिये डिक्री देने में न्यायालय के विवेक पर रोक लगाता है।'' (महत्व दिया गया)

(15) देवकुएर(सुप्रा) के मामले के तथ्य हस्तगत मामले के तथ्यों से काफी अलग है, क्योंकि उस मामले में, किरायेदार के समक्ष पक्षकार के रूप में नहीं थे। मौजूदा मामले में, प्रतिवादी संख्या 3 से 10 किरायेदार है, जो मुकदमे की सम्पत्ति में रहते है। उक्त उत्तरदाता निश्चित रूप से कब्जा देने की स्थिति में थे। इसलिये, यह कहना कि अपीलकर्ता एक अलग कानून के तहत अपनी बेदखली के लिये स्वतंत्र कार्यवाही दायर करने के हकदार होगे, आदेश 2 नियम 2 सिविल प्रक्रिया संहिता के प्रावधानों के साथ-साथ अधिनियम 1963 की धारा 34 के प्रावधानों को विफल करने जैसा होगा। इस प्रकार, प्रथम अपीलीय न्यायालय, साथ ही उच्च न्यायालय, सर्वोपरि महत्व के इस प्रश्न पर विचार करने में विफल रहा।

(16) अधिनियम 1963 की धारा 34 के परन्तुक का उद्देश्य कार्यवाही की बहुलता और अदालती शुल्क के राजस्व के नुकसान से बचना है। जब विशिष्ट राहत अधिनियम,1877 लागू था, तब भारत के विधि आयोग द्वारा वर्ष 1958 में दी गई 9 वीं रिपोर्ट ने परन्तुक में कुछ संशोधनों का सुझाव दिया था, जिसके अनुसार, यदि वादी कोई परिणामी

राहत की मांग किये बिना घोषणात्मक राहत की मांग कर सकता है, तब वह किसी अन्य मुकदमे/कार्यवाही में अपना अगलवा दावा करने के लिये अदालत की अनुमति उपरांत ऐसा दावा चला सकता है। हालांकि, ऐसे संशोधन को स्वीकार नहीं किया गया। अधिनियम 1963 में ऐसे सुझाव के अनुरूप कोई प्रावधान नहीं है।

(17) एक मात्र घोषणात्मक डिक्री आम तौर पर ज्यादातर मामलों में गैर-निष्पादन योग्य रहती है। यद्यपि, किसी पक्ष को किसी ऐसे अनुतोष को, जिसे मांगा नहीं गया है को संशोधन के माध्यम से मांगे जाने पर कोई रोक नही है, बशर्ते कि यह परिसीमा से प्रभावित न हो। हांलाकि, प्रतिवादियों के लिये ऐसे बिन्दु/आपत्ति को जल्द से जल्द उठाना अनिवार्य है (प्रकाश चंद खुराना आदि बनाम हरनाम सिंह और अन्य, एआईआर 1973 सुप्रीम कोर्ट 2065 और एमपी राज्य बनाम मांगीलाल शर्मा, 1998(1) एससीटी 322)।

मुनि लाल बनाम द ओरिएंटल फायर एंड जनरल इंश्योरेंस कंपनी लिमिटेड और अन्य, 1996(1)आरआरआर 418 में, इस न्यायालय ने घोषणात्मक डिक्री से संबंधित प्रकरण पर विचार करते हुये पाया कि ''परिणामी अनुतोष के बिना केवल घोषणा आवश्यक अनुतोष प्रदान नहीं करती है''

अदालत को घोषणात्मक अनुतोष देने से इन्कार करने का आदेश देती है।''

शकुन्तला देवी बनाम कमला एवं अन्य(2005) 5 एससीसी 390 में, इस न्यायालय ने इस मुद्दे पर विचार करते हुये निर्णीत किया है कि:

''एक साधारण घोषणात्मक डिक्री अंतिम रूप से प्राप्त नहीं होती है यदि इसका उपयोग कब्जे जैसी किसी भविष्य की डिक्री प्राप्त करने के लिये किया जाना है। ऐसे मामलों में, यदि पहले की घोषणात्मक डिक्री के आधार पर कब्जे के लिये मुकदमा दायर किया जाता है, तो यह प्रतिवादी के लिये यह स्थापित करने के लिये खुला है कि घोषणात्मक डिक्री जिस पर मुकदमा आधारित है वह वैध डिक्री नहीं है।''

(18) उपरोक्त को ध्यान में रखते हुये, यह स्पष्ट है कि अपीलकर्ताओं/वादी द्वारा दायर मुकदमा चलने योग्य नहीं था, क्योंकि उन्होंने परिणामी अनुतोष का दावा नहीं किया था। प्रतिवादी संख्या 3 और 10 के मुकदमे की सम्पत्ति के कब्जे में होने के कारण, अपीलकर्ताओं/वादी को आवश्यक रूप से सम्पत्ति के कब्जे को प्राप्त करने का परिणामी अनुतोष मांगना चाहिये था। लिखित बयान दाखिल करते समय उत्तरदाताओ/प्रतिवादियों द्वारा ऐसी आपत्ति भी ली गई थी। अपीलकर्ताओं/वादी ने इस स्तर पर या इसके उपरांत भी वाद पत्र में संशोधन करने का कोई प्रयास नहीं किया गया। अपीलकर्ताओं/वादी द्वारा मांगी गई घोषणा राहत की प्रकृति की नहीं थी। एक उपासक यह मांग कर सकता है कि दोनों पक्षों के बीच की डिक्री देवता पर बाध्यकारी नहीं है,

क्योंकि केवल घोषणा ही देवता के हितों की रक्षा कर सकती है। यहां मांगी गई राहत अपीलकर्ताओं/वादीगणों के स्वंय के लाभ के लिये थी।

परिणामस्वरूप, अपीलों में बल नहीं पाया जाता है और तदनुसार खारिज की जाती है। हर्जे के संबंध में कोई आदेश नहीं है,

अपील खारिज की गई।

हरिओम शर्मा 'अत्री

आर0जे0एस (जिला न्यायाधीश संवर्ग)

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक हरिओम शर्मा अत्री (न्यायिक अधिकारी) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरणः- यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिये स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिये इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और अधिकारिक उद्देश्यों के लिये, निर्णय का अंगेे्रजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।